Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.03, No.5, December, 2024

वैदिक संस्कारों का लोकजीवन पर प्रभाव

सुस्मिता राय
शोधच्छात्रा
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ, 226007

****

शोधसार *वैदिक संस्कार भारतीय संस्कृति और सभ्यता के आधारभूत स्तंभ है, जो मानव जीवन के प्रत्येक चरण को पवित्र, शुद्ध, और अनुशासित बनाने का दिशा निर्देश करते है। इसमें जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त विभिन्न संस्कारों का सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, और सांस्कृतिक संरचना पर प्रभाव विश्लेषण किया गया है। यही नहीं इस संस्कार के द्वारा मृत्यु के वाद मानव को आत्म- सिद्धान्त द्वारा भी प्रभावित करने का प्रयास किया जाता है। इस शोधपत्र में वैदिक ग्रन्थो ओर लोक परंपराओं के तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से यह पता चला कि ये संस्कार समाज में अनुशासन, सामाजिक सामंजस्य और सांस्कृतिक संरक्षण को बढ़ावा देते हैं। इसके परिणाम स्वरूप, वैदिक संस्कार न केवल व्यक्तिगत जीवन को पवित्र बनाते हैं, बल्कि सामूहिक जीवन को भी संरचित करते हैं। यह शोधपत्र वैदिक परंपराओं की प्रासंगिकता को आधुनिक समाज में समझने का एक प्रयास मात्र है।*

मुख्य शब्दः- *वैदिक संस्कार, लोकजीवन, भारतीय संस्कृति, सामाजिक प्रभाव*

****

प्रस्तावनाः-

हिन्दु धर्म संस्कृति में संस्कारों का स्थान अतीव महत्वपूर्ण है। वैदिक ज्ञान के अनुसार जीवन के विभिन्न चरणों में (जन्म से मृत्यु पर्यन्त) किए जाने वाले धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठान को 'संस्कार' कहते है।

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैनिषेकादिर्द्विजन्मानाम् ।

कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च ।।[i]

संस्कार मानव जीवन को सफल, सार्थक एवं सुन्दर बनाने में मदद करता है। ये संस्कार केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामुहिक स्तर और सामाजिक स्तर पर भी बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं। वैदिक संस्कारो का उद्देश्य है- व्यक्ति को उसके जीवन के विभिन्न चरणों में सठीक मार्गदर्शन करना और समाज में उसके स्थान को निर्धारित करना है ।

संस्कार शब्द की व्युत्पत्तिः-

संस्कार शब्द की निष्पत्ति इस प्रकार होती है- सम् उपसर्ग पूर्वक कृञ् धातु से घञ् प्रत्यय करने से और भूषण अर्थ को द्योतित करने वाले सुट् का आगम, पाणिनी के 'संपरिभ्यां करोतौ भूषणे' सूत्र से होता है।[ii] इसका अर्थ है- संस्कृयते अलंक्रियते शरीरादिर्येन स संस्कारः। अर्थात जिसके द्वारा शरीर और आत्मा अलंकृत हौती हैं, उसे संस्कार कहते है।

दुसरे रुप में संस्कार उसे कहते है– जिस क्रिया द्वारा मन वाणी उत्तम हो 'संस्कारो हि गुणान्तरा धानं मुच्यते'। अर्थात् पहले से विद्यमान दुर्गुणों त्यागकर उस स्थान पर सद्गुणों का प्रतिष्ठा करने को ही संस्कार कहते हैं।[iii]

वामन शिवराम आप्टे ने संस्कार शब्द के कई अर्थ स्पष्ट किये है – संस्कृत करना, पूर्ण करना, पौलिश करना, शिक्षा, अनुशीलन, तैयार करना, श्रृंगार, सजावट, अलंकार,

अन्तःशुद्धि, पवित्रीकरण, विचारभाव, मनःशक्ति, धीरता आदि।[iv] चरक संहिता में संस्कार की परिभाषा दिये गये है- 'संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते।'[v] वेदान्त सूत्र के अनुसार संस्कार की परिभाषा- "संस्कारो हि नाम गुणाधानेन वा स्याद दोषापनयनेनवा"। तन्त्रवार्तिक के अनुसार- "योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते"।[vi]

गृह्यसूत्रों में संस्कारो की संख्या वारह से अठारह तक दी गई है। आश्वलायन में 11 संस्कार, पारस्कर में 12 संस्कार, बौधायन में 13 संस्कारों का वर्णन मिलता है। वैखानस धर्मसूत्र में 18 संस्कारों का वर्णन मिलता है। गौतम धर्मसूत्र में आठ आत्मगुण सहित 40 संस्कार माने गए हैं।[vii] स्वामी दयानन्द सरस्वती के मत में 16 संस्कार है[viii]।

मनुस्मृति में गर्भाधान से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक 13 संस्कार है- गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामधेय, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, उपनयन, केशान्त, समावर्तन, विवाह, अन्तेष्टि। परवर्ती स्मृतियों में कर्णवेध, विवाहाग्नि-परिग्रह, तथा त्रेताग्नि संग्रह इन तीन संस्कारों के समावेश के साथ 16 संस्कारों का उल्लेख मिलता हैं।

अथर्ववेद में 11 संस्कारो का वर्णन प्राप्त होता है- गर्भाधान, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, अन्त्येष्टि ।

महाभारत में 13 संस्कारो का उल्लेख है- गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूर्णकर्म, उपनयन, विवाह, गोदान, उपकर्म, अन्तेष्टि ।

भारतीय साहित्य में संस्कारो की संख्या के विषय में विभिन्न मत है किन्तु सर्वस्वीकृत 16 संस्कार निम्नोक्त है-

1.**गर्भाधान संस्कार**- हिन्दु धर्म में सोलह संस्कारो में से पहला एवं अत्यंत महत्वपूर्ण संस्कार है- गर्भाधान संस्कार। गर्भाधानसंस्कार के लिए वेद भी आज्ञा देता है।[ix] यह संस्कार दाम्पत्य जीवन के आरम्भ में किया जाता है । इसका उद्देश्य संतान प्राप्ति की इच्छा के साथ शुद्ध और धार्मिक वातावरण में एक नए जीवन का प्रारंभ करना है। गर्भाधान संस्कार सुनिश्चित करता है कि संतान का जन्म धार्मिक और सामाजिक मान्यताओं के अनुसार हो, इससे परिवार की परंपराएँ और सांस्कृतिक धरोहर अगली पीढ़ी में स्थानान्तरित होती हैं। यह संस्कार संतान के जन्म से पहले ही शुद्ध और पुण्य कर्मो का आह्वान करता है, जिससे माता-पिता और समाज में यह भावना बनी रहती है कि जीवन का हर पहलू धार्मिक आस्था और नैतिकता से जुड़ा हुआ है। इस संस्कार के माध्यम से लोकजीवन में यह भावना प्रसारित होती है कि प्राकृतिक और आध्यात्मिक जिससे समाज में जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है। गर्भाधान संस्कार के दौरान विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान और मंत्रोच्चारण होते हैं, जो लोकजीवन की परंपराओं को जीवित रखते है। इसके साथ ही लोकगीत, कहानियाँ और संस्कार से जुड़ी अन्य सांस्कृतिक विधियाँ भी संतानोत्पत्ति से जुड़े लोकजीवन का हिस्सा बन जाती हैं, जिससे संस्कृति का संरक्षण ओर हस्तांतरण होता है। अतः गर्भाधान संस्कार परिवार समाज और वंश की निरंतरता के साथ-साथ धर्म नैतिकता और सांस्कृतिक धरोहर को बनाए रखने में सहायक होता है।

2. **पुंसवन संस्कार** – गर्भाधान संस्कार के बाद प्रमुख दूसरा संस्कार है- पुंसवन संस्कार। गर्भावस्था के तीसरे या चौथे महीने में यह संस्कार किया जाता हैं। पुंसवन संस्कार एक सामूहिक आयोजन होता है, जिससे परिवार ओर समाज के लोक मिलकर गर्भवती महिला के अच्छे स्वास्थ्य ओर संतान की सुरक्षा के लिये प्रार्थना करते है। प्राचीन समय में इसका उद्देश्य गर्भ में पुत्र प्राप्ति की कामना करना था, परन्तु आधुनिक समय में इसका उद्देश्य गर्भस्थ शिशु की सुरक्षा और शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को सुनिश्चित करना।

पुंसवन संस्कार में गर्भवती महिला और बच्चे के प्रति परिवार और समाज की सहयोगिता प्रकट होती है। गर्भवती महिला को अपनी शारीरिक और मानसिक स्थिति का ध्यान रखने की प्रेरणा दी जाती है। उनकी आहार, दिनचर्या और मानसिक स्थिति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। समाज गर्भवती महिलाओं के प्रति अधिक संवेदनशील और देखभालपूर्ण दृष्टिकोण अपनाता है। समाज के लोग इस समय एक-दूसरे के साथ जुड़ते है, और मिलकर खुशी और सहयोग का वातावरण बनाते हैं।

3. **सीमन्तोन्नयन संस्कार** – हिन्दु धर्म में गर्भाधान के सातवें या आठवें महीने में सीमन्तोन्नयन संस्कार किया जाता है। इस संस्कार का उद्देश्य है- गर्भवती महिला और गर्भस्थ शिशु के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को सुरक्षित रखना। समाज गर्भवती महिला के प्रति मानसिक रुप से प्रसन्न, शान्ति और स्थिर वनाए रखने के लिए अधिक संवेदनशील और सहानुभूति प्रकट करते है ताकि वह स्वस्थ संतान को जन्म दे सके और गर्भस्थ शिशु की मस्तिष्क उत्तम संस्कारों से सुसंस्कृत हो जाए।

4. **जातकर्म संस्कार** – हिन्दु धर्म में सोलह संस्कारों में से एक प्रमुख संस्कार है जातकर्म संस्कार । यह संस्कार शिशु के जन्म के तुरंत बाद किया जाता है। मनुस्मृति में विधान है कि नालछेदन से पहले पुरुष का जातकर्म करना चाहिए।[x] इस संस्कार का उद्देश्य है नवजात शिशु के स्वागत, उसके शारीरिक , मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा, दीर्घायु की कामना, और जीवन के शुभारंभ के लिए आशीर्वाद प्रदान करना होता है। यह संस्कार लोक जीवन में नए सदस्य के प्रति अपनत्व और प्रेम प्रकट करता है। इस संस्कार के माध्यम से माता-पिता के आशीर्वाद और प्यार का अनुभव मिलता है, जिससे परिवार के प्रति शिशु की प्रेम और लगाव की भावना प्रकट होती है ।

5. **नामकरण संस्कार** – हिन्दु धर्म के 16 संस्कारो में से एक नामकरण संस्कार प्रमुख है। हिन्दु समाज में नाम का विशेष धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व होता है। नामकरण संस्कार का उद्देश्य है कि शिशु को औपचारिक रुप से एक नाम देना जो उसकी पहचान का प्रतीक बनता है। सामाजिक पहचान का प्रारंभिक चरण नामकरण संस्कार से शिशु को समाज का एक हिस्सा बनाने का माध्यम है। जिससे उसकी सामाजिक भूमिका शुरु होती है। लोकजीवन में यह संस्कार संदेश देता है कि प्रत्येक व्यक्ति की एक विशिष्ट पहचान होती है। और समाज में उसकी एक मान्यता होती है। मनुस्मृति में वर्णित है कि बालक का नाम दशमी और द्वादशी या पवित्र तिथि को, या पवित्र मुहुर्त में या ज्योतिष शास्त्र से निश्चित गुणयुक्त नक्षत्र मे या फिर अशौचनिवृत्ति हो जाए तव रखना चाहिए[xi]। शिशु के नाम में एक विशेष अर्थ और शक्ति जुड़ी होती है, जिससे लोकजीवन में यह विश्वास प्रकट होता है कि नाम व्यक्ति के जीवन पर गहरा प्रभाव डालता है। वेद ने भी इस नामकरण संस्कार की आज्ञा दी है- 'कोसि कतमोसि कस्यामि को नामामि.... ।।'[xii]

6. **निष्क्रमण संस्कार** – इस संस्कार में शिशु के जन्म के बाद चौथे महीने में शिशु को पहलीबार घर से बाहर ले जाया जाता है और सूर्य देवता की दर्शन करने हेतु उनकी पूजा की जाती है।[xiii] इसका उद्देश्य है कि शिशु को बाहरी वातावरण से परिचित कराना और सूर्यदेव की कृपा प्राप्त करना है। अथर्ववेद मे कहा गया है – 'शिवे से स्तां द्यावापृथ्वी असंतापे अभिश्रिया...।'[xiv] निष्क्रमण संस्कार में लोकजीवन में प्रकृति और सूर्य उपासना के महत्व को उजागर करता है । सूर्यदेव को जीवनदायी शक्ति के रुप में मान्य दिया जाता हैं । और यह संस्कार इस बात पर बल देता है कि मनुष्य का जीवन सूर्य ओर प्रकृति की कृपा से संचालित होता है एवं लोकजीवन में सूर्य और प्रकृति के प्रति सम्मान और श्रद्धा की भावना पैदा करता है ।

7. **अन्नप्राशन संस्कार** – हिन्दु धर्म के सोलह संस्कारो में से एक महत्वपूर्ण है अन्नप्राशन संस्कार। अन्नप्राशन संस्कार शिशु के शारीरिक और मानसिक विकास की दिशा में पहला बड़ा कदम है। क्योंकि इस संस्कार के द्वारा शिशु अव माँ के दूध या तरल आहार से ठोस आहार की और वढ़ता है। ठोस भोजन की शुरुआत शिशु के स्वास्थ्य और उसकी वृद्धि के लिये आवश्यक है। "जैसा अन्न-वैसा मन" की उक्ति सर्वविदित है। "आहार शुद्वौ सत्तशुद्विः"[xv] का शास्त्र वचन भी विद्वतजन जानते है। इसलिए अन्न को संस्कारित करके देना आवश्यक है। अन्नप्राशन संस्कार एक सामाजिक और पारिवारिक आयोजन है, जिसमे परिवार, रिश्तेदार, मित्र, पड़ोसी लोग शामिल होते है। इस संस्कार के दौरान पहली बार शिशु को ठोस भोजन देने से पहले देवताओं का आह्वान किया जाता है ओर आशीर्वाद लिया जाता है। परिवार के बड़े- बुजुर्ग भी शिशु को आशीर्वाद और शुभकामनाएँ देते है, जो शिशु के भविष्य के लिए मंगल का प्रतीक होते है।

8. **चूड़ाकर्म संस्कार** – चूड़ाकर्म संस्कार को 'मुंडन संस्कार' भी कहा जाता है। इस संस्कार का उद्देश्य है- शिशु के शारीरिक, आध्यात्मिक और मानसिक, शुद्धिकरण । इस संस्कार में शिशु के जन्म के तीसरे वर्ष में उसके सिर के सभी बाल मुंडन किया जाता है। यह माना जाता है कि जन्म के समय शिशु के बाल गर्भ के अशुद्ध तत्वों से प्रभावित होते है और उन्हे हटाने से शिशु की शुद्धि होती है। शिशु की सिर की त्वचा साफ होती है और बालों के विकास में सुधार होता है। इसके अलावा शिशु के सिर के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक होती है। अथर्ववेद के एक मंत्र में कहा गया है कि चूड़ाकर्म संस्कार के माध्यम से बालक धनवान और प्रजावान होता है।[xvi]

9. **कर्णवेध संस्कार**- हिन्दु धर्म के 16 संस्कारो में से प्रमुख है कर्णवेध संस्कार , जिसमें शिशु के कान छेदे जाते है। यह संस्कार 6 महीने से 5 वर्ष तक के बीच में करना उचित माना गया है।[xvii] आयुर्वेद और पारंपारिक चिकित्सा पद्धतियों के अनुसार, कान छेदने से शिशु के स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। कान के कुछ विशिष्ट विंदुओं पर छेद करने से दृष्टि, मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र के विकास में सहायक माना जाता है। कान और मस्तिष्क के बीच सम्पर्क को बेहतर बनाता है। स्वास्थ्य, संरक्षण एवं सौन्दर्य की दृष्टि से सुश्रुत की मान्यता है कि कर्णवेध से अण्डवृद्धि की बीमारी नहीं होती है।[xviii] कान छेदने की परंपरा न केवल धार्मिक और स्वास्थ्य संबंधी कारणों से होती है बल्कि सामाजिक पहचान ओर सौन्दर्य का भी प्रतीक होती है। लोक जीवन पर इस संस्कार का प्रभाव गहरा और स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के प्रति जागरूक होते है और प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों पर विश्वास करते है।

10. **उपनयन संस्कार**- उपनयन संस्कार को 'जनेऊ संस्कार' या 'यज्ञोपवीत संस्कार' के रुप में भी जाना जाता है। इस संस्कार को आध्यात्मिक और शौक्षिक जीवन में प्रवेश कराने का प्रतीक माना जाता है। इस संस्कार से वालक को बल, ऊर्जा और तेज की प्राप्ति होती है और शिशु मे आध्यात्मिक भाव जागृत होता है। पुराणों में कहा गया है इस संसार के द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य का द्वितीय जन्म होता है। उपनयन संस्कार में यज्ञोपवीत धारण करने का अर्थ यह होता है कि व्यक्ति अव सामाजिक, नैतिक, धार्मिक कर्तव्यो का निर्वहन करना शुरू कर दिया है।[xix]

11. **समावर्तन संस्कार**- समावर्तन संस्कार वैदिक संस्कारो में एक महत्वपूर्ण संस्कार है। समावर्तन का शाब्दिक अर्थ है- 'वापस आना' अर्थात् विद्यार्थी अपने गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् लौकिक जीवन में प्रवेश करना। इस संस्कार के माध्यम से विद्यार्थी को यह बोध कराया जाता है कि अब उसे अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की जिम्मेदारियों

को निभाने के लिये तैयार रहना चाहिए। इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है कि गुरुकुल से प्राप्त शिक्षा का उपयोग समाज के कल्याण के लिये करना।

12. **विवाह संस्कार**- हिन्दु धर्म के 16 संस्कारो में से विवाह संस्कार को एक महत्वपूर्ण और पवित्र संस्कार माना जाता है। यह केवल गृहस्थाश्रम का प्रवेशद्वार मात्र नही अपितु आधारशीला है। यह संस्कार न केवल व्यक्तिगत जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, बल्कि लोकजीवन में भी इसकी गहरी छाप है। विवाह के समय कई रीति-रिवाज, परंपराऐं और धार्मिक अनुष्ठान होते है, जो कि विभिन्न क्षेत्रों और जातियों की सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखते हैं। यह संस्कार व्यक्ति को आत्मनिर्भर और जिम्मेदार बनाने में सहायक होता है। विवाह संस्कार न केवल व्यक्तिगत जीवन में बदलाव लाता है वल्कि समाज की एकता और स्थिरता में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

13. **गृहस्थ संस्कार**- भारतीय संस्कृति के चारों आश्रमों में से गृहस्थ आश्रम व्यक्ति जीवन का दुसरा और सवसे महत्वपूर्ण चरण है। इस आश्रम में व्यक्ति अपने पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक दायित्वों का निर्वहन करता है। गृहस्थ आश्रम को चारों आश्रमों का आधार माना जाता है, क्योंकि गृहस्थ व्यक्ति ही समाज के अन्य आश्रमों में रहने वाले लोगों का पालन पोषण करता है। आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक दायित्यों का निर्वहन और सांस्कृतिक परंपराओं का पालन आज भी गृहस्थ आश्रम के महत्वपूर्ण अंग है। गृहस्थ आश्रम न केवल व्यक्तिगत जीवन को दिशा प्रदान करता है बल्कि पुरे समाज की समृद्धि और विकास में भी योगदान देता है।

14. **वानप्रस्थ संस्कार –** चारों आश्रमों में तीसरा आश्रम है वानप्रस्थ आश्रम। इसका शाब्दिक अर्थ है वन में निवास। सामान्यतः पचास वर्ष की आयु के बाद जव व्यक्ति अपने बच्चों को सक्षम और आत्मनिर्भर देखता है तव शुरु होता है। इस आश्रम में व्यक्ति सांसारिक जीवन से धीरे -धीरे निवृत्त होकर ध्यान, तप, और समाज सेवा के मार्ग पर चलते है।[xx] वह लोकजीवन में शिक्षा, चिकित्सा और अन्य सामाजिक कार्यों में सक्रिय रुप से भाग लेता है। समाज के वृद्ध व्यक्ति आज भी ज्ञान अनुभव और परंपराओं के माध्यम से सामाजिक समस्याओं का समाधान निकालने में मदद करते हैं। वे अपनी आध्यात्मिक और व्यावहारिक शिक्षा को नई पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य करते है।

15. **संन्यास संस्कार**- इसको भारतीय जीवन के चार आश्रमों में से अंतिम और सर्वोच्च माना जाता है। संन्यास आश्रमों में व्यक्ति सांसारिक बंधनो और दायित्वों से पूर्णतया मुक्त होकर आत्मज्ञान, ध्यान, और मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। यह जीवन का त्यागमय, संयमित और ध्यानमय रुप होता है। संन्यास का अर्थ केवल सांसारिक जिम्मेदारियों से मुक्त होना नहीं है बल्कि समाज के प्रति एक नए रुप में सेवा भाव को अपना कर लोकजीवन में शिक्षा, धर्म, सत्य, और साधना का प्रचार एवं महत्व को समझाना है।

16. **अन्त्येष्टि संस्कार-** हिन्दु धर्म के 16 संस्कारो का सवसे अंतिम संस्कार है अन्त्येष्टि संस्कार जिसे मृत्यु के वादि मृतकों की आत्मा के लिए श्रद्धांजलि देने का कार्य करता है। इसे अंतिम संस्कार या श्राद्धकर्म के नाम से भी जाना जाता है। मृत आत्मा की शान्ति और मोक्ष प्राप्ति ही इस संस्कार का उद्देश्य है। अन्त्येष्टि संस्कार समाज को जीवन की नश्वरता और कर्तव्यों की याद दिलाता है, और मृत्यु को एक नए जीवन की शुरुआत के रुप में देखने की प्रेरणा देता है।

उपसंहारः-

वैदिक संस्कारों का लोकजीवन पर व्यापक प्रभाव है। वेद, शास्त्र, उपनिषद तथा अन्य वैदिक साहित्य में संस्कारों का

विशद वर्णन मिलता है। वेदों में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त संस्कारों का वर्णन है। वैदिक संस्कारों के माध्यम समाज में एकता, प्रेम, और समर्पण की भावना को बढ़ावा देते हैं। इसप्रकार वैदिक संस्कारों को समझना और उनका पालन करना आज की पीढ़ी के लिए अत्यंत आवश्यक है। से व्यक्ति अपने कर्तव्यों, रिश्तों, और आध्यात्मिकता को समझता है। वैदिक संस्कार भारतीय संस्कृति की नींव है और

Corresponding Author: Susmita Roy
E-mail: susmitajharalta144@gmail.com
Received: 11 December, 2024; Accepted: 20 December, 2024. Available online: 30 December, 2024
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License

[i] मनुस्मृति- 2/26, पृ. 70
[ii] गीता प्रेस, संस्कारप्रकाश, पृ. 15
[iii] मनुस्मृति, पृ. 14
[iv] शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश , पृ.1083
[v] चरकसंहिता, विमान 01/ 27
[vi] गीता प्रेस, संस्कारप्रकाश, पृ. 12
[vii] चत्वारिशत् संस्काराः अष्टौ आत्मगुणा। गौतम धर्मसूत्र 8/14-24
[viii] गर्भाद्या मृत्युपर्यन्ताः संस्काराः षोडशेव हिं। वक्ष्यन्ते तं नमस्कृत्यनन्तविद्यं परमेश्वरम् । संस्कारविधिः ग्रन्थारम्भ, श्लोक-2
[ix] अथर्ववेद, 14/1/58, 14/2-31, 32, 38, 39
[x] "प्राङ्नाभिवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधियते" । मनुस्मृति 2/29
[xi] "नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वाऽस्य कारयेत्.... ।।" मनुस्मृति 2/30)
[xii] यजुर्वेद 7/29
[xiii] चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोर्निष्क्रामणं गृहात्.....।।मनुस्मृति 2/34
[xiv] अथर्ववेद 8/2/14-15
[xv] छंदोग्य उपनिषद, 6.4.12
[xvi] अथर्ववेद 6.68.3
[xvii] पारस्करगृह्यसूत्र 2.11, कात्यायन गृह्यसूत्र
[xviii] सुश्रुत, शरीरस्थान, 16.1
[xix] ऋग्वेद 3.8.4, यजुर्वेद 16-17, अथर्ववेद, 11.5.3, 19.19.8, कठोपनिषद 1.9
[xx] ऋग्वेद 10.146.5 , अथर्ववेद 9.5.1, 11.41.1

सन्दर्भग्रन्थ सूचीः-

1. शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश ,मोतीलाल बनारसीदास, 2015।

2. महर्षि दयानन्द सरस्वती, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, 2010।

3. संस्कार प्रकाश, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2011 ।

4. श्री भीमाशंकर चन्द्रप्पा साखरे, गर्भाधान, पुंसवन च सीमन्तोन्नयनसंस्कार (हिन्दी),सुरभारती प्रकाशन, सीताराम नगर, लातूर ।

5. गिरिधर गोपाल शर्मा, मनुस्मृति, चोखम्बा संस्कृत प्रतिष्टान, नई दिल्ली 2016 ।

6. डॉ गङ्गासागर राय, याज्ञवल्क्य स्मृति, चोखम्बा संस्कृत प्रतिष्टान, 2015 ।

7. भगवद गीता, सानुवाद शंकरभाष्य सहित, गीताप्रेस, गोरखपुर, 1988 वि. ।

8. डॉ विक्रांत सिंह तोमर, वेदांत व जीवन प्रबंधन, प्रभात प्रकाशन, 2021 ।

9. रामगोविन्द त्रिवेदी, वैदिक साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, 1950।

10. आचार्य विद्याधर शुक्ल, प्रो. रविदत्त त्रिपाठी, चरक संहिता, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन ।

11. डॉ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, उपनिषद प्रकाश, विजयकृष्ण लखनपाल प्रकाशन, नई दिल्ली 2014।

12. अथर्ववेद संहिता, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2019 ।

11. पं ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पाणिनीयः अष्टाध्यायीसूत्रपाठः, आर्ष प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011 ।

12. महाभारत, गीताप्रेस, गोरखपुर, सम्वत् 2075 ।

13. आचार्य श्रीराम शर्मा, ऋग्वेद संहिता, गायत्री तपोभूमि, मथुरा 1965।

14. प्रो. लक्ष्मीश्वर झा, कात्यायन श्रोतसूत्र, चौखम्बा ओरियन्टालिया, 2013 ।

15. ईशादि नौ उपनिषद, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2019 ।

16. आचार्य श्रीराम शर्मा, संस्कारों की पुण्य परम्परा, गायत्री तपोभूमि, मथुरा 2015।

17. महर्षि दयानन्द सरस्वती, संस्कार विधि, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, 2014।

18. डॉ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, संस्कार-चन्द्रिका, विजयकृष्ण लखनपाल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014।